ढलवाँ लोहा

हिन्दी ADDA

दीपक शर्मा

ढलवाँ लोहा

"लोहा पिघल नहीं रहा," मेरे मोबाइल पर ससुरजी सुनाई देते हैं, "स्टील गढ़ा नहीं जा रहा..."

कस्बापुर में उनका ढलाईघर है : कस्बापुर स्टील्ज।

https://www.hindiadda.com/dhalavan-loha/

"कामरेड क्या कहता है?" मैं पूछता हूँ।

ढलाईघर का मैल्टर, सोहनलाल, कम्युनिस्ट पार्टी का कार्ड-होल्डर तो नहीं है लेकिन सभी उसे इसी नाम से पुकारते हैं।

ससुरजी की शह पर : 'लेबर को यही भ्रम रहना चाहिए, वह उनके बाड़े में है और उनके हित सोहनलाल ही की निगरानी में हैं... जबकि है वह हमारे बाड़े में...'

"उसके घर में कोई मौत हो गई है। परसों। वह तभी से घर से गायब है..."

"परसों?" मैं व्याकुल हो उठता हूँ लेकिन नहीं पूछता, 'कहीं मंजुबाला की तो नहीं?' मैं नहीं चाहता ससुरजी जानें सोहनलाल की बहन, मंजुबाला, पर मैं रीझा रहा हूँ। पूरी तरह।

"हाँ, परसों! इधर तुम लोगों को विदाई देकर मैं बँगले पर लौटता हूँ कि कल्लू चिल्लाने लगता है, कामरेड के घर पर गमी हो गई..."

हम कस्बापुर लौट आते हैं। मेरी साँस उखड़ रही है। विवाह ही के दिन ससुरजी ने वीणा को और मुझे इधर नैनीताल भेज दिया था। पाँच दिन के प्रमोद काल के अंतर्गत। यह हमारी दूसरी सुबह है।

"पापा," वीणा मेरे हाथ से मोबाइल छीन लेती है, "यू कांट स्नैच आर फन। (आप हमारा आमोद-प्रमोद नहीं छीन सकते) हेमंत का ब्याह आपने मुझसे किया या अपने कस्बापुर स्टील्ज से?"

उच्च वर्ग की बेटियाँ अपने पिता से इतनी खुलकर बात करती हैं क्या? बेशक मेरे पिता जीवित नहीं हैं और मेरी बहनों में से कोई विवाहित भी नहीं लेकिन मैं जानता हूँ, उन पाँचों में से एक भी मेरे पिता के संग ऐसी धृष्टता प्रयोग में न ला पातीं।

"पापा आपसे बात करेंगे," वीणा मेरे हाथ में मेरा मोबाइल लौटा देती है; उसके चेहरे की हँसी उड़ रही है।

"चले आओ," ससुरजी कह रहे हैं, "चौबीस घंटे से ऊपर हो चला है। काम आगे बढ़ नहीं रहा।"

"हम लौट रहे हैं," मुझे सोहनलाल से मिलना है। जल्दी बहुत जल्दी।

"मैं राह देख रहा हूँ," ससुरजी अपना मोबाइल काट लेते हैं।

"तुम सामान बाँधो, वीणा," मैं कहता हूँ, "मैं रिसेप्शन से टैक्सी बुलवा रहा हूँ..."

सामान के नाम पर वीणा तीन-तीन दुकान लाई रही : सिंगार की, पोशाक की, जेवर की।

"यह कामरेड कौन है?" टैक्सी में बैठते ही वीणा पूछती है।

"मैल्टर है," सोहनलाल का नाम मैं वीणा से छिपा लेना चाहता हूँ, "मैल्ट तैयार करवाने की जिम्मेदारी उसी की है..."

"उसका नाम क्या है?"

"सोहनलाल," मुझे बताना पड़ रहा है।

"उसी के घर पर आप शादी से पहले किराएदार रहे?"

"हाँ... पूरे आठ महीने..."

पिछले साल जब मैंने इस ढलाईघर में काम शुरू किया था तो सोहनलाल से मैंने बहुत सहायता ली थी। कस्बापुर मेरे लिए अजनबी था और मेरे स्रोत थे सीमित। आधी तनख्वाह मुझे बचानी-ही-बचानी थी, अपनी माँ और बहनों के लिए। साथ ही उसी साल मैं आई.ए.एस. की परीक्षा में बैठ रहा था। बेहतर अनुभव के साथ। बेहतर तैयारी के साथ। उससे पिछले साल अपनी इंजीनियरिंग खत्म करते हुए भी मैं इस परीक्षा में बैठ चुका था लेकिन उस बार अपने पिता के गले के कैंसर के कारण मेरी तैयारी पूरी न हो सकी थी और फिर मेरे पिता की मृत्यु भी मेरे परीक्षा-दिनों ही में हुई थी। ऐसे में सोहनलाल ने मुझे अपने मकान का ऊपरी कमरा दे दिया था। बहुत कम किराए पर। यही नहीं, मेरे कपड़ों की धुलाई और प्रेस से लेकर मेरी किताबों की झाड़पोंछ भी मंजुबाला ने अपने हाथ में ले ली थी। मेरे आभार जताने पर, बेशक, वह हँस दिया करती, "आपकी किताबों से मैं अपनी आँखें सेंकती हूँ। क्या मालूम दो साल बाद मैं इन्हें अपने लिए माँग लूँ?"

"उसके परिवार में और कितने जन थे?"

"सिर्फ दो और। एक, उसकी गर्भवती पत्नी और दूसरी, उसकी कॉलेजिएट बहन..."

"कैसी थी बहन?"

"बहुत उत्साही और महत्वाकांक्षी..."

"आपके लिए?" मेरे अतीत को वीणा तोड़ खोलना चाहती है।

"नहीं, अपने लिए," अपने अतीत में उसकी सेंध मुझे स्वीकार नहीं, "अपने जीवन को वह एक नई नींव देना चाहती थी, एक ऊँची टेक..."

"आपको जमीन पर?" मेरी कोहनी वीणा अपनी बाँह की कोहनी के भीतरी भाग पर ला टिकाती है, "आपके आकाश में?"

"नहीं," मैं मुकर जाता हूँ।

"अच्छा, उसके पैर कैसे थे?" वीणा मुझे याद दिलाना चाहती है उसके पैर उसकी अतिरिक्त राशि हैं। यह सच है वीणा जैसे मादक पैर मैंने पहले कभी न देखे रहे : चिक्कण एड़ियाँ, सुडौल अँगूठे और उँगलियाँ, बने-ठने नाखून, संगमरमरी टखने।

"मैंने कभी ध्यान ही न दिया था," मैं कहता हूँ। वीणा को नहीं बताना चाहता मंजुबाला के पैर उपेक्षित रहे। अनियंत्रित। ढिठाई की हद तक। नाखून उसके कुचकुचे रहा करते और एड़ियाँ विरूपित।

"क्यों? चेहरा क्या इतना सुंदर था कि उससे नजर ही न हटती थी! ...तेरे चेहरे से नजर नहीं हटती, तेरे पैर हम क्या देखें?" वीणा को अपनी बातचीत में नए-पुराने फिल्मी गानों के शब्द सम्मिलित करने का खूब शौक है।

"चेहरे पर भी मेरा ध्यान कभी न गया था," वीणा से मैं छिपा लेना चाहता हूँ, मंजुबाला का चेहरा मेरे ध्यान में अब भी रचा-बसा है : उत्तुंग उसकी गालों की आँच, उज्ज्वल उसकी ठुड्डी की आभा, बादामी उसकी आँखों की चमक, टमाटरी उसके होठों का विहार, निरंकुश उसके माथे के तेवर... सब कुछ। यहाँ तक कि उसके मुँहासे भी।

"पुअर थिंग (बेचारी)" घिरी हुई मेरी बाँह को वीणा हल्के से ऊपर उछाल देती है।

"वीणा के लिए तुम्हें हमारी लाँसर ऊँचे पुल पर मिलेगी," ससुरजी का यह आठवाँ मोबाइल कॉल है - इस बीच हर आधे घंटे में वे पूछते रहे हैं "कहाँ हो?" 'कब तक पहुँचोगे?' "ड्राइवर के साथ वीणा बँगले पर चली जाएगी और तुम इसी टैक्सी से सीधे ढलाईघर पहुँच लेना..."

"डेड लौस, माए लैड," ढलाईघर पहुँचने पर ससुरजी को ब्लास्ट फरनेस के समीप खड़ा पाता हूँ। लेबर के साथ।

ढलाईघर में दो भट्टियाँ हैं : एक यह, झोंका-भट्टी, जहाँ खनिज लोहा ढाला जाता है, जो ढलकर आयरन नौच्च, लोहे वाले खाँचे में जमा होता रहता है और उसके ऊपर तैर रहा कीट, सिंडर नौच्च में - कांचित खाँचे में। स्टील का ढाँचा लिए, ताप-प्रतिरोधी, यह झोंका-भट्टी **100** फुट ऊँची है। आनत रेलपथ से छोटी-छोटी गाड़ियों में कोक, चूना-पत्थर और खनिज लोहा भट्टी की चोटी पर पहुँचाए जाते हैं, सही क्रम में, सही माप में। ताकि जैसे ही चूल्हों और टारबाइनों से गरम हवा भट्टी में फूँकी जाए, कोक जलकर तापमान बढ़ा दे - खनिज लोहे की ऑक्सीजन खींचते-खींचते और फिर अपना कार्बन लोहे को ले लेने दे। बढ़ चुके ताप से चूना-पत्थर टुकड़े-टुकड़े हो जाता है और खनिज लोहे के अपद्रव्यों और कोक से मिलकर भट्टी की ऊपरी सतह पर अपनी परत जा बनाता है और पिघला हुआ लोहा निचली परत साध लेता है। दूसरी भट्टी खुले चूल्हे वाली है - ओपन हार्थ फरनेस। यहाँ ढलवें लोहे से स्टील तैयार किया जाता है जो लेडल, दर्बी, में उमड़कर बह लेता है और उसके ऊपर तैर रहा लोह-चून, स्लैग, थिंबल, अंगुश्ताना में निकाल लिया जाता है।

"क्या किया जाए?" ससुरजी बहुत परेशान हैं, "आयरन नौच्च खाली, सिंडर नौच्च खाली लेडल खाली, थिंबल खाली..."

"मैल्टर साहब अब यहाँ हैं नहीं," लेबर में से एक पुराना आदमी सफाई देना चाहता है, "हम भी क्या करें? न हमें तापमान का ठीक अंदाजा मिल रहा है और न ही कोक, चूना-पत्थर और खनिज लोहे का सही अनुपात..."

ब्लास्ट फरनेस में तापमान कम है, भट्टी ढीली है जबकि तापमान का **2800** से **3500** डिग्री फारेनहाइट तक जा पहुँचना जरूरी रहता है।

पीपहोल से अंदर गलने हेतु लोहे पर मैं नजर दौड़ाता हूँ।

लोहा गल नहीं रहा।

भट्टी की कवायद ही गड़बड़ है। मेरे पूछने पर कोई लेबर बता नहीं पाता भट्टी में कितना लोहा छोड़ा गया, कितना कोक और कितना लाइमस्टोन।

ससुरजी के साथ मैं दूसरी भट्टी तक जा पहुँचता हूँ।

इसमें भी वही बुरा हाल है सब गड्डमड्ड।

यहाँ भी चूना-पत्थर, सटील स्क्रैप और कच्चा ढलवाँ लोहा एक साथ झोंक दिया गया मालूम देता है जबकि इस भट्टी में पहले चूना-पत्थर गलाया जाता है। फिर स्क्रैप के गट्ठे। और ढलवाँ लोहा तभी उँडेला जाता है जब स्क्रैप पूरी तरह से पिघल चुका हो।

"कामरेड को बुला लें?" मैं सोहनलाल के पास पहुँचने का हीला खोज रहा हूँ। उसे मिलने की मुझे बहुत जल्दी है।

"मैं भी साथ चलता हूँ," ससुरजी बहुत अधीर हैं।

सोहनलाल अपने घर के बाहर बैठा है। कई स्त्री-पुरुषों से घिरा।

"आप यहीं बैठे रहिए," ससुरजी को गाड़ी से बाहर निकलने से मैं रोक देता हूँ, "कामरेड को मैं इधर आपके पास बुला लाता हूँ..."

भीड़ चीरकर मैं सोहनलाल के पास जा पहुँचता हूँ।

मैं अपनी बाँहें फैलाता हूँ।

वह नहीं स्वीकारता।

उठकर अपने घर में दाखिल होता है।

मैं उसके पीछे हो लेता हूँ।

फर्श पर बिछी एक मैली चादर पर उसकी गर्भवती पत्नी लेटी है।

सोहनलाल अपने घर के आँगन में शुरू हो रही सीढ़ियों की ओर बढ़ रहा है।

मैं फिर उसके पीछे हूँ।

सीढ़ियों का दरवाजा पार होते ही वह मेरी तरफ मुड़ता है। एक झटके के साथ मुझे अपनी तरफ खींचता है और दरवाजे की साँकल चढ़ा देता है।

सामने वह कमरा है जिसमें मैंने आठ महीने गुजारे हैं।

अपनी आई.ए.एस. की परीक्षा के परिणाम के दिन तक।

वह मुझे कमरे के अंदर घसीट ले जाता है।

"यह सारी चिट्ठी तूने उसके नाम लिखीं?" मेरे कंधे पकड़कर वह मुझे एक जोरदार हल्लन देता है और अपनी जेब के चिथड़े कागज मेरे मुँह पर दे मारता है, "वह सीधी लीक पर चल रही थी और तूने उसे चक्कर में डाल दिया। उसका रास्ता बदल दिया। देख। इधर ऊपर देख। इसी छत के पंखे से लटककर उसने फाँसी लगाई है..."

मेरे गाल पर सोहनलाल एक जोरदार तमाचा लगाता है।

फिर दूसरा तमाचा।

फिर तीसरा।

फिर चौथा।

मैं उसे रोकता नहीं।

एक तो वह डीलडौल में मुझसे ज्यादा जोरवार है और फिर शायद मैं उससे सजा पाना भी चाहता हूँ।

अपने गालों पर उसके हाथों की ताकत मैं लगातार महसूस कर रहा हूँ।

मंजुबाला की सुनाई एक कहानी के साथ :

रूस की **1917** की कम्युनिस्ट क्रांति के समय यह कहानी बहुत मशहूर रही थी; जैसे ही कोई शहर क्रांतिकारियों के कब्जे में आता, क्रांति-नेता उस शहर के निवासियों को एक कतार में लगा देते और बोलते, "अपने-अपने हाथ फैलाकर हमें दिखाओ।" फिर वे अपनी बंदूक के साथ हर एक निवासी के पास जाते और जिस किसी के हाथ उन्हें 'लिली व्हाइट' मिलते उसे फौरन गोली से उड़ा दिया जाता, "इन हाथों ने कभी काम क्यों नहीं किया?"

मंजुबाला मेरे हाथों को लेकर मुझे अक्सर छेड़ा करती, "देख लेना। जब क्रांति आएगी तो तुम जरूर धर लिए जाओगे।"

और मैं उसकी छेड़छाड़ का एक ही जवाब दिया करता, "मुझे कैसे धरेंगे? अपनी नेता को विधवा बनाएँगे क्या?"

बाहर ससुरजी की गाड़ी का हॉर्न बजता है। तेज और बारंबार।

बिल्कुल उसी दिन की तरह जब मेरी आई.ए.एस. की परीक्षा का परिणाम आया था। और वे मुझे यहाँ से अपनी गाड़ी में बिठलाकर सीधे मेरे शहर, मेरे घर पर ले गए थे, मेरी माँ के सामने। वीणा का विवाह प्रस्ताव रखने।

मुझसे पहले सोहनलाल सीढ़ियाँ उतरता है।

मैं प्रकृतिस्थ होने में समय ले रहा हूँ। मंजुबाला की अंतिम साँस मुझे अपनी साँस में भरनी है।

नीचे पहुँचकर पाता हूँ, ससुरजी अपने हाथ की सौ-सौ के सौ नोटोंवाली गड्डी लहरा रहे हैं, "मुझे कल ही आना था लेकिन मुझे पता चला तुम इधर नहीं हो। श्मशान घाट पर हो।"

"हँ... हँ..." सोहनलाल की निगाह ससुरजी के हाथ की गड्डी पर आ टिकी है। लगभग उसी लोभ के साथ जो मेरी माँ की आँखों में कौंधा था जब ससुरजी ने मेरे घर पर पाँच-पाँच सौ के नोटोंवाली दो गड्डियाँ लहराई थीं, "यह सिर्फ रोका रुपया है। बाकी देना शादी के दिन होगा। वीणा मेरी इकलौती संतान है..."

"मेरे साथ अभी चल नहीं सकते?" ससुरजी के आदेश करने का यही तरीका है। जब भी उन्हें जवाब 'हाँ' में चाहिए होता है तो वे अपना सवाल नकार में पूछते हैं। विवाह की तिथि तय करने के बाद उन्होंने मुझसे पुछा था, "सोलह मई ठीक नहीं रहेगी क्या?"

"जी..." सोहनलाल मेरे अंदाज में अपनी तत्परता दिखलाता है।

"गुड..." ससुरजी अपने हाथ की गड्डी उसे थमा देते हैं, "सुना है तुम्हारे घर में खुशी आ रही है। ये रुपये अंदर अपनी खुशी की जननी को दे आओ।"

"जी..."

"फिर हमारे साथ गाड़ी में बैठ लो। उधर लेबर ने बहुत परेशान कर रखा है। निकम्मे एक ही रट लगाए हैं, मैल्टर साहब के बिना हमें कोई अंदाज नहीं मिल सकता, न तापमान का, न सामान का..."

"जी..."

"गुड। वेरी गुड।"

मालिक के लिए ड्राइवर गाड़ी का दरवाजा खोलता है और ससुरजी पिछली सीट पर बैठ लेते हैं।

"आओ, हेमंत..."

मैं उनकी बगल में बैठ जाता हूँ।

ड्राइवर गाड़ी के बाहर खड़ा रहता है।

"जानते हो?" एक-दूसरे के साथ हमें पहली बार एकांत मिला है, "गायब होने से पहले इस धूर्त ने क्या किया?"

"क्या किया?" मैं काँप जाता हूँ। मंजुबाला के साथ मेरे नाम को घंघोला क्या?

"लेबर को पक्का किया, लोहा पिघलना नहीं चाहिए..."

"मगर क्यों?" मेरा गला सूख रहा है।

"कौन जाने क्यों? इसीलिए तो तुम्हें यहाँ बुलाया..."

"मुझे?"

"सोचा तुम्हारी बात वह टालेगा नहीं। तुम उसे अपनी दोस्ती का वास्ता देकर वापस अपने, माने हमारे, बाड़े में ले आओगे..."

"लेकिन आपने तो उसे इतने ज्यादा रुपये भी दिये?"

"बाड़े में उसकी घेराबंदी दोहरी करने के वास्ते। वह अच्छा कारीगर है और फिर सबसे बड़ी बात, पूरी लेबर उसकी मूठ में है..."

उखड़ी साँस के साथ सोहनलाल ड्राइवर के साथ वाली सीट ग्रहण करता है।

जरूर हड़बड़ाहट रही उसे।

इधर कार में हमारे पास जल्दी पहुँचने की।

"तुम क्या सोचते हो, कामरेड?" ससुरजी उसे मापते हैं, "लोहा क्यों पिघल नहीं रहा? मैल्ट क्यों तैयार नहीं हो रहा है?"

"ढलाईघर जाकर ही पता चल पाएगा। लेबर ने कहाँ चूक की है..."

सोहनलाल साफ बच निकलता है।

ससुरजी मेरी ओर देखकर मुस्कराते हैं, "तुम बँगले पर उतर लेना, हेमंत। कामरेड अब सब देखभाल लेगा। उसके रहते लोहा कैसे नहीं पिघलेगा? स्टील कैसे नहीं गढ़ेगा..."

"जी," मैं हामी भरता हूँ।

मुझे ध्यान आता है, बँगले पर वीणा है। उसका वातानुकूलित कमरा है...

'वीणा के हाथ कैसे हैं?'

सहसा मंजुबाला दमक उठती है।

'लिली व्हाइट!'

'और आप उसे मेरी कतार में लाने की बजाय उसकी कतार में जा खड़े हुए?'

'मैं खुद हैरत में हूँ, मंजुबाला! यह कैसी कतार है? जहाँ मुझसे आगे खड़े लोग मेरे लिए जगह बना रहे हैं?'

https://www.hindiadda.com/dhalavan-loha/